सप्तधातु और आधुनिक विज्ञान

• डॉ. रज्जन कुमार

जैनदर्शन एक प्राचीन वैज्ञानिक दर्शन है। विज्ञान जगत में हो रहे नित नूतन अविष्कारों तथा अनेक वैज्ञानिक मान्यताओं का अभूतपूर्व वर्णन जैनागमों में किया गया है। यही नहीं अनेक ऐसी जटिल समस्याएँ जिनके बारे में आज वैज्ञानिक हतप्रभ है उनका अनूठा समाधान भी कई जगह पर जैन ग्रंथों में प्राप्त होना है। शाकाहार एवं उसके लाभ पर्यावरण की रक्षा क्यों और कैसे, हिंसा निवारण आदि कुछ ऐसे ही ज्वलंत प्रश्न हैं जिन पर विज्ञान निश्चित रूप से कोई सर्वमान्य हल नहीं खोज पाया है परंतु जैन ग्रंथों में इन समस्याओं का समुचित समाधान मिलता है। इसी प्रकार हमारा शरीर तथा संसार के अंयान्य जीवों का शरीर किन-किन तत्वों से मिलकर बना है, इनके शरीर में कौन कौन से धातु, उपधातु आदि पाए जाते है, इन विषयों पर जैनाचार्यों ने व्यापक रूप से चिंतन किया है। प्रस्तुत निबंधों में जैनों द्वारा प्रतिपादित सप्तधातु की व्याख्या आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में करने का प्रयास किया जा रहा है।

धातु क्या है इस संबंध में जैनों का कहना है कि जीव का शरीर कुछ तत्वों से मिलकर बना है और ये तत्व ही धातु कहलाते है। इन धातुओं की कुल संख्या सात है।[१] इन सप्त धातुओं के नाम हैं।[२] १.रस, २.रक्त, ३. मांस, ४. मेद, ५. अस्थि, ६. मज्जा और ७. वीर्य। तात्पर्य यह है कि जीव के शरीर में कुल सात प्रकार के ही धातु पाए जाते है और ये सातों मिलकर ही शरीर का निर्माण करते हैं।

(१) रस धातु- जीव अपने जीवन को टिकाए रखने के लिए आहार लेता है। यह आहार ठोस और द्रव दोनों ही रूपों में लिया जाता है। यह आहार जीव के शरीर में जाकर भिन्न-भिन्न प्रकार की क्रिया प्रक्रिया के फलस्वरुप एक पतले रस के रूप में परिणत हो जाता है और यही पतला रस रस धातु कहलाता है। योगशास्त्र में आचार्य हेमचंद्र रस के बारे में लिखते हैं खाए गए अन्न व पिए गए पान के परिपाक से जो पतला निस्पंद (पतली धातु विशेष) उत्पन्न होता है उसी का नाम रस धातु है।[३]

जीव ठोस आहार को अपने दाँतों की सहायता से छोटे-छोटे टुकड़े में बाँटता है। फिर उन छोटे-छोटे टुकड़े को पीसता है। यह पीसा हुआ भोजन मुँह से आहार नाल में जाता है और वहाँ से होते हुए पेट एवं छोटी बड़ी आंतों में पहुँचता है। इन सभी स्थानों पर जीव के शरीर पर पाए जाने वाले विभिन्न तरह के रासायनिक तत्व (enzymes) भोजन से मिलते हैं। जब ये तत्व भोजन, से मिलते है तो पीसा हुआ भोजन और ज्यादा महीन हो जाता है। इसके साथ ही साथ शरीर के विभिन्न अंगों में संकोच-विकोच रहता है इस कारण भी आहार और ज्यादा पतला हो जाता है। इन सब क्रियाओं के फलस्वरूप आहार द्रव के रूप में बदल जाता है और यही रस धातु कहलाती है।

इस रस धातु से शरीर का निर्माण कैसे होता है, इस संबंध में विज्ञान सम्मत सिद्धांत का अवलोकन किया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने आँतों को काटकर देखा है और इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आंतो की भीतरी बनावट असमतल है। इस असमतल सतह पर अंकुर निकले रहते है और इन अंकुरों में रस या द्रव के सोखने की शक्ति होती है। पचित आहार या रस जब इन अंकुरों के सम्पर्क में आता है तब वह इनके द्वारा सोख लिया जाता है और यह शोषित रस सम्पूर्ण शरीर में रक्तादि के माध्यम से प्रवाहित होता है और शरीर के जिस भाग को जिस तत्व की आवश्यकता होती है उसकी पूर्ति हो जाती है। अंकुरों तथा आतों की सतहों में रक्त वाहिकाओं का जाल बिछा रहता है और इनमें सदैव रक्त प्रवाहित होता रहता है। [४]

(२) रक्त धातु- धातुओं में जिसका वर्ण लाल होता है वह रक्त धातु के नाम से जाना जाता है। [५] योग शास्त्र में रक्त धातु के बारे में कहा गया है कि इसकी उत्पत्ति रस धातु से होती है। [६] वैज्ञानिक भी जैनों के इस मत का समर्थन करते हैं, लेकिन वे मात्र लाल वर्ण वाले धातु को ही रक्त नहीं मानते है। प्रयोगों तथा निरीक्षणों के आधार पर उन्होंने यह सिद्ध कर दिया है कि रक्त लाल रंग के अतिरिक्त श्वेत रंग का भी होता है।

संभवत: जैनों ने सप्त धातुओं की व्याख्या करने एवं उनमें कुछ अंतर दिखलाने के लिए ही लाल वर्ण वाले धातु को रक्त कहा है क्योंकि सामान्यतया लोग रक्त को लाल वर्ण वाला द्रव मानते है। परंतु वैज्ञानिक रक्त के तीन भेदों का उल्लेख करते है। [७] १. प्लाज्मा, २. लाल रक्त कण और ३. श्वेत रक्त कण। रक्त के हल्के पीले रंग का द्रव होता है यही प्लाज्मा है। इसी प्लाज्मा में छोटे-छोटे गोल आकार लाल रक्त कण तैरते रहते हैं। इन्हीं कणों के कारण रक्त का रंग लाल होता है। इन दोनों के अतिरिक्त शरीर में अनिश्चित आकार वाले एक दूसरे प्रकार का रक्ता होता है, जिसका वर्ण श्वेत होता है और श्वेत रक्त कण के नाम से जाना जाता है।

रक्त का रंग लाल उसमें घुले हुए हीमोग्लोबिन नामक लौह तत्व के कारण है। हीमोग्लोबिन आक्सीजन नामक गैस को सोख लेता है और उसे सम्पूर्ण शरीर में पहुँचाता है। आक्सीजन जीवन को टिकाए रखने के लिए एक आवश्यक गैस़ है क्योंकि शरीर में पाई जाने वाली वस्तुएँ इससे मिलकर जलती है और इस कारण शरीर को आवश्यक ऊर्जा और गर्मी मिलती है। इसी उर्जा के कारण जीव अपनी गतिशीलता को कायम रखता है। मनुष्य पशु के शरीर में पाया जाने वाला यह लौह तत्व पौधों के शरीर जैसे हरी पत्तियों आदि में भी पाया जाता है। यहाँ यह कार्बनडायक्साईड नामक गैस को सोखकर पौधों को भोजन बनाने में सहयोग करता है। अत: इतना तो तय हो गया कि रक्त जीव के शरीर में गैस संवाहक का कार्य करते हैं। गैस संवहन की इस प्रक्रिया में किसी परिस्थिति में ये श्वसन का कार्य करते हैं तो कभी आहार निर्माण में सहयोग करते है।

यह तो पूर्व में ही बताया जा चुका है कि रक्त का रंग मात्र लाल नहीं होता सफेद भी होता है। यह श्वेत रक्त कण जीवों को रोगाणुओं से लड़ने में मदद करता है। किंतु इस संसार में कुछ ऐसे भी जंतु है जिनके शरीर में लाल रक्त कण पाया ही नहीं जाता है अर्थात ऐसे जीवों के शरीर में जो रक्त होता है उनमें लौह तत्व नहीं पाया जाता है। लौह तत्व नहीं रहने के कारण ही उनके रक्त का रंग लाल नहीं होता है। तिलचट्टा इसका सामान्य उदाहरण है। [८]

(३) मांस धातु - जीव के शरीर की सारी आकृति, मुख की सुंदरता, अंगों की सुडौल रचना ये सभी मांस के द्वारा ही संभव है। मांस ही जीव के शरीर में उपस्थित अस्थि आदि ढाँचे के ऊपर इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकार स्थित होता है कि वह आकर्षक लगता है। इसी के कारण जीव को एक विशिष्ट व्यक्तित्व मिलता है। जैन परम्परा में मांस धातु के लिये मात्र मांस शब्द का ही प्रयोग किया जाता है, लेकिन वैज्ञानिक इस मांस पेशी इन दो शब्दों से जानते हैं। इस संबंध में उनका कहना है कि शरीर में स्थित मांस का पिंड एक अकेले मांस से मिलकर नहीं बना है बल्कि उस पिंड को बनाने में मांस के कई टुकड़े लगे हैं। मांस के दो टुकड़े परस्पर एक तंतु से जुड़े रहते है जिन्हें पेशी कहा जाता है। तात्पर्य यह है कि मांस पिंड मांस और पेशी से मिलकर बने हुए है संभवतः यही कारण है कि वैज्ञानिक मांस धातु के लिए मांस पेशी शब्द का प्रयोग करते है।[९]

प्रायः मांस पेशियों गहरे लाल रंग की होती है। संभवतः इसी कारण जैनों ने इसे रक्त से उत्पन्न मान लिया है, क्योंकि रक्त का रंग भी लाल होता है। इस संबंध में योगशास्त्र में लिखित इस संदर्भ को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। इस ग्रंथ में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि रुधिर से जो धातु विशेष उत्पन्न होता है वह मांसधातु है।[१०] परंतु वैज्ञानिक ऐसा नही मानते है। मांस गहरे लाल रंग का क्यों दिखाई देता है इस संबंध में डॉ. टी.एन.वर्मा का कहना है कि मांस में विभिन्न प्रकार की रक्त वाहिकाएँ पाई जाती है, जिनमें सदैव रक्त भरा रहता है और यही कारण है कि मांस लाल रंग का दिखाई देता है।[११] मांस क्या है इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए डॉ.वजीफदार लिखते है कि यह विभिन्न प्रकार के रंगों से बना एक स्थूल पिंड है जो रक्तवाहिकाओं, स्नायु तंत्रिकाओं तथा लिम्फों से युक्त रहता है।[१२]

जीव के शरीर में पाई जाने वाली मांस पेशियों विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने में उसे सहायता प्रदान करती है। कार्य करने की दृष्टि से मांस-पेशियों दो प्रकार की होती है।[१३] १. अनैच्छिक और २. ऐच्छिक। जिन मांस पेशियों को हम अपनी इच्छा के अनुरूप कार्य करने को प्रेरित नहीं कर सकते है वे अनैच्छिक मांस-पेशियाँ है। हृदय, आंतादि की मांस-पेशियाँ हमारी इच्छा के अनुरूप कार्य नहीं करती है। जब आंतों में भोजन पहुँचता है या जब इसे भोजन की आवश्यकता होती है यह कार्य करना प्रारंभ कर देता है। हृदय लगातार धड़कता रहता है। हम चाहकर भी इसका धड़कना बंद नहीं कर सकते है। इन पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं होता है। जिन मांसपेशियों को हम अपनी इच्छानुसार कार्य करने को प्रेरित कर सकते है वे ऐच्छिक कहलाती है जितनी भी मांसपेशियाँ अस्थियों पर लगी रहती और जिनसे गति होती है सब ऐच्छिक है। हाथ-पाँव मुखादि की मांसपेशियाँ ऐच्छिक है।

जैनों ने मांसधातु की उत्पत्ति रक्त से होना माना है इस संबंध में वैज्ञानिकों का उत्तर नकारात्मक है। वे मांस धातु की उत्पत्ति रस धातु से होना मानते है। क्योंकि उनका कहना है कि मांसपेशियों अच्छे आहार लेने से बनती है न कि रक्त धातु से। आहार अच्छा हो या बुरा इन सबका पाचन होना है और आमाशय में इसका रस बनता है जिससे रक्त मांसादि सभी अवयव बनते है।

(४) मेद धातु- जीव के शरीर में पायी जाने वाली वसा धातु का स्थान चौथा है। सामान्यतया इसका रंग हल्का पीला या घी के जैसा होता है। लेकिन कुछ जीवों में असामान्य अवस्था में इसका रंग भूरा भी हो जाता है। मेद या वसा धातु जीवों के शरीर में त्वचा के नीचे पाया जाता है। यह शरीर को कोमल, चिकना बनाए रखने में मदद करने के साथ साथ शरीर के कुछ अंगों की रक्षा भी करता है। कभी-कभी यह शरीर के कुछ भागों में अधिक मात्रा में जमा हो जाता है और जीव की प्राण रक्षा की जगह प्राणलेवा भी हो जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योगशास्त्र में कहा गया है कि वसाधातु का निर्माण मांस धातु से होता है।[१४] आधुनिक विज्ञान जगत में वसाधातु के संबंध में जैनों की यह अवधारणा मान्य नहीं है। वसाधातु का निर्माण तैलीय पदार्थों से होता है मांस धातु से नहीं। जीवों के शरीर में जो वसा तत्व पाया जाता है उसे वैज्ञानिक फैट सेल्स (fat cells) या एडिपोज टिश्यू (adipose tissue) कहते हैं। जीव के शरीर में विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं में जब यह जमा हो जाता है तब इसे फैट सेल्स कहा जाता है तथा फैट सेल्स के समूह को ही एडिपोज टिश्यू कहा जाता है।[१५]

पुरुषों एवं महिलाओं दोनों के शरीर मे वसा धातु पाया जाता है। लेकिन महिलाओं में यह पुरुषों की अपेक्षा अधिक मात्रा में पाया जाता है। महिलाओं एवं पुरुषों में वसाधातु के इस सामान्य वितरण का कारण उन दोनों की शारीरिक रचना की विभिन्नता एवं कार्य की प्रकृति है। महिलाओं के शरीर में दुग्ध ग्रंथियाँ पाई जाती है।[१६]. फिर इसका शरीर कोमल होता है इन सबका कारण वसाधातु ही है। दुग्ध ग्रंथियों में वसा धातु अधिक मात्रा में पाया जाता है। महिलाओं को पुरुषों की अपेक्षा शारीरिक परिश्रम कम करना पड़ता है, शारीरिक परिश्रम कम करने से वसा तत्व कम जलता है इस कारण भी महिलाओं के शरीर में वसाधातु की अधिक मात्रा पाई जाती है।

वसा धातु शरीर को गर्मी प्रदान करता है। शारीरिक परिश्रम करने से तथा श्वसन प्रक्रिया द्वारा जो आक्सीजन ग्रहण किया जाता है जब यह वसा धातु से मिलता है तब यह जलने लगता है। ज्वलन की इस प्रक्रिया में अत्यधिक मात्रा में ताप उत्पन्न होता है और यह ताप शरीर को गर्मी प्रदान करता है। शरीर के कुछ अंगों यथा, हथेली, तलवे, नितम्बों आदि पर अधिक मात्रा में जमा रहता है। इन स्थानों पर यह उन अंगों में पाए जाने वाली शिराओं की रक्षा करता है। शरीर के इन अंगों पर शरीर के भार के कारण अधिक दबाव पडता है। इस दबाव के कारण हो सकता है कि इन अंगों में पाई जाने वाली वाहिकऐं फट जाती और जीव की मृत्यु का कारण बन सकती है। लेकिन यहाँ पर जमा वसा तत्व इन दबावों को स्वयं वहन कर लेता है और वाहिकाएँ सुरक्षित रह जाती है। इस तरह के वसा धातु दबाव रक्षक Soakabsorbor) का काम करता है और जीवों के प्राण की रक्षा भी करता है। कभी-कभी वसा धातु प्राणियों के पेट, कूल्हे, जोड़ो आदि स्थानों पर अधिक मात्रा में जमा हो जाता है इस कारण वह प्राणी काफी स्थूल हो जाता है और अपना कार्य सामान्य ढंग से नहीं कर पाता है। अतः इस परिस्थिति में वसा धातु प्राणी के लिए रक्षक न होकर भक्षक की भूमिका का कार्य करता है।

अस्थि धातु - जीव का शरीर कोमल और कठोर दोनों ही प्रकार की वस्तुओं से मिलकर बना है। सामान्य रूप से कोमल भाग मांस-पेशी से बनता है जबकि कठोर भाग का निर्माण एक विशेष प्रकार के तत्व से होता है जिसे अस्थि या हड्डी कहा जाता है। जीव के शरीर का ढाँचा इन्हीं अस्थियों से बना होता है । इन अस्थियों के ऊपर मांस-पेशी चर्म आदि लगे रहते हैं। जिनके कारण प्राणी को एक निश्चित आकार मिलने के साथ साथ एक विशेष प्रकार का व्यक्तित्व भी मिलता है। शरीर को निश्चित आकार देने, मांस-पेशियों आदि को सम्यक् रूप से ढलाव प्रदान करने के कारण अस्थियां हड्डी को शरीर का आधार भी माना जाता है।

योगशास्त्र के अनुसार अस्थि मेद या चर्वी से उत्पन्न होने वाली कीकस धातु हैं।[१७] कीकस का अर्थ कठोर होता है और अस्थि की प्रकृति कठोर होती ही है। संस्कृत हिन्दी कोश में कीकस का अर्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हड्डी बताया गया है। [१८] अतः यह स्पष्ट है कि अस्थि की उत्पत्ति मेद या चर्वी से होती है। वैज्ञानिकों का मत इससे भिन्न है। वे अस्थि को मेद या चर्वी से उत्पन्न होना नहीं मानते है। उनका कहना है कि अस्थि एक कठोर धातु है और यह कैल्शियम मैग्निशियम आदि रासायनिक तत्वों के कार्बोनेट फोस्फेट से बना है। इन रासायनिक तत्वों का सामान्य बोलचाल की भाषा में चूना कहा जाता है। [१९]

जीव के शरीर में जितने भी धातु पाए जाते है उन्हें वैज्ञानिक संदर्भों में कोशिका कहा जाता है। अस्थि भी एक धातु है इस कारण इसे भी कोशिक माना जाता है। ये कोशिकाएँ बहुशाखात्वित होती है और इस शाखाओं में एक विशेष प्रकार का तत्व भरा रहता है जिसे मैट्रिक्स कहा जाता है। प्राणी जब शैशवावस्था या भ्रूणावस्था में रहता है तो उसके शरीर में पाई जाने वाली अस्थियाँ अत्यंत मुलायम होती है और इस कार्टिलेज के नाम से जाना जाता है। जब शिशु वृद्धि करता है तब उसकी हड्डियों कठोर हो जाती है और यही कठोर भाग पूर्ण अस्थि कहलाता है। इस प्रकार हम कह सकते है कि प्राणी के शरीर में दो प्रकार की हड्डियाँ पाई जाती है। १.मुलायम जिसे कार्टिलेज कहा जाता है और २. कठोर जिसे अस्थि या हड्डि के नाम से जाना जाता है। जीव के शरीर में जो अस्थि पाई जाती है वह खोखली होती है। खोखली होने के कारण इनका वजन कम होता है। यद्यपि यह खोखली होती है, परंतु इसकी मजबूती में किसी तरह की कमी नहीं पाई जाती। इसका मुख्य कारण चूने के लवण है जो इन्हें मजबूती प्रदान करते हैं। इसके खोखला होने के कारण है। अगर हड्डी पूरी तरह ठोस होती तो इसका भार काफी ज्यादा होना और संभव था कि प्राणी इस अत्यधिक भार को वहन नहीं कर पाता फलतः वह अपने कार्यों का सम्पादन समुचित ढंग से नहीं कर पाता। इसके साथ ही साथ इन खोखले स्थानों में लाल अस्थि मज्जा भरी रहती है। जिसमें रुधिर वाहिनियाँ होती है। इनसे भोजन ग्रहण कर कुछ विशेष कोशिकाएँ विभाजन करती है फलस्वरुप हड्डियाँ बढती है।

हड्डी के कारण ही प्राणी चलता है, भार उठाता है, बैठता है। शरीर के कुछ संवेदनशील एवं कोमल अंग हड्डी के द्वारा रक्षित होते है जैसे हृदय फेफ़डा आदि। देखना सुनना आदि भी अस्थि के सहयोग से ही संभव है। क्योंकि आंखे हड्डी के बने गोले के अंदर ही रहती है और सम्यक् रूप से चलती है जिसके कारण प्राणी छोटे-बड़ी सभी चीजों को देख पाता है। ध्वनि के प्रकंपन के कारण कान में बने हड्डी के हथौडे कान के परदे पर चोट करते हैं जिसके कारण प्राणी ध्वनि को सुन पाता है। थोडे से में कहें तो हम यही देखते हैं कि अस्थि प्राणी के लिए अत्यंत महत्व की चीज है।

(६) मज्जा धातु - जैनों ने सप्तधातुओं में मज्जा को छठें स्थान पर रखा है मज्जा को जैनों ने धातु माना है लेकिन आयुर्वेदाचार्यों ने इसे उपधातु माना है। अतः मज्जा धातु है या उपधातु यह एक शोध का विषय है, लेकिन यहाँ हम मज्जा मानकर ही चल रहे हैं। इस धातु की उत्पत्ति अस्थि धातु से मानी गई है। परंतु विज्ञान जगत के लिए यह बात मान्य नहीं है। मज्जा धातु अस्थि के पोले भाग में पाई अवश्य जाती है तथा इसका निर्माण भी वही होता होगा लेकिन इसका यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता है कि यह अस्थि धातु से उत्पन्न होता है। इसकी उत्पत्ति कैसे होती है इस संबंध में अभी शोधकार्य चल रहे हैं। वैज्ञानिकों ने अपने शोध के अनुक्रम इस धातु के संबंध कई महत्वपूर्ण खोज किए है - अस्थि में पाई जानी वाली मज्जा धातु लाल रक्त कण का निर्माण करती है (जबकि जैनों ने रक्त का निर्माण रस धातु से होना माना है) बच्चों के शरीर में पाई जानी वाली इस धातु का रंग लाल होना जबकि वयस्कों मे इसका रंग पीत वर्ण का होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाल रक्त मज्जा या मज्जा प्राणी के शरीर में पाई जाने वाली लबी हड्डियों के दोनों छोरों पर ही मिलता है। प्राणी के शरीर के हाथ पाँव की हड्डियाँ ज्यादा लंबी होती है अर्थात इन हड्डियों में ही मज्जा पाया जाता है। अतः हम यह नहीं कह सकते हैं कि मज्जा का निर्माण अस्थि धातु से ही होता है। कुछ रोगों की अवस्था में मज्जा नष्ट होने लगता है क्योंकि इन रोगों को उत्पन्न करने वाले रोगाणु मज्जा का ही भक्षण करने लगते हैं मज्जा के नष्ट होने की स्थिति में लाल रक्त कण का निर्माण होना बंद हो जाता है फलतः जीव धीर-धीरे मर जाता है।

(७) वीर्य धातु - प्राणी के शरीर में पाए जाने वाले सप्त धातुओं में से वीर्य धातु के अतिरिक्त अन्य छः धातुएं किसी न किसी रूप में शरीर का निर्माण से जुड़ी रहती है परंतु वीर्य धातु इस शरीर की उत्पत्ति का ही कारण बनता है अर्थात इसके कारण ही जीव को शरीर मिलता है। इस संसार में सामान्य रूप से दो प्रकार के प्राणी मिलते है - नारी और पुरुष। इन दोनों के शरीर में सप्तधातुएँ पाई जाती है। जब ये नारी और पुरुष परस्पर मिलते है तो उनके इस मिलन को सहवास या संभोग कहा जाता है। इस प्रक्रिया के अनंतर दोनों के वीर्य मिलते है जिससे एक नवीन शिशु की उत्पत्ति होती है, फिर यह शिशु इसी प्रक्रिया के अनंतर एक नया शिशु उत्पन्न करता है, इस तरह से शिशु पर शिशु की परपंरा चलती रहती है। तात्पर्य यह है कि वीर्य धातु जो प्राणी के शरीर में पाया जाना एक नए शरीर निर्माण की क्षमता रखता है।

योगशास्त्र के अनुसार वीर्य धातु की उत्पत्ति मज्जा धातु से मानी गई है। आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से योगशास्त्र में वीर्य धातु के संबंध में उल्लेखित यह मत कभी भी मान्य नहीं हो सकता है। क्योंकि वीर्य धातु की जहाँ उत्पत्ति होती है वहाँ मज्जा धातु बनता ही नहीं। नर में वीर्य धातु नरजननांग में बनते है तथा मादा में मादा जननांग में। ये दोनों ही अंग पेट के नीचे पाये जाते हैं। नर और मादा वीर्य कहाँ बनते हैं यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है, लेकिन उसका वर्णन संभव नहीं है। नर और मादा वीर्य कैसे होते हैं इसका वर्णन किया जा सकता है।

नरवीर्य को शुक्राणु कहते है। यह एक अत्यंत सूक्ष्म जीव है। यह तीन भागों में बटा रहता है - सिर, गर्दन और पूंछ। पूंछ की सहायता से यह गति करता तथा सिर की सहायता से मादा वीर्य के साथ संपर्क करता है और उसके साथ मिलकर नए शिशु उत्पन्न करने के लिए उपयुक्त वातावरण बनाता है। मादा वीर्य डिम्ब के नाम से जाना जाता है। यह शुक्राणु से आकार में बड़ा होता है। सहव सके अंनतर पुरुष द्वारा स्खलित शुक्क्रीत नर जननांग से होता हुआ डिम्ब के अंदर प्रवेश करता है। जब शुक्क्रीत डिम्ब के अंदर प्रवेश कर जाता है तब वह डिम्ब निषेचित डिम्ब कहलाता है। यह निषेचित डिम्ब ही कई प्रक्रियाओं से गुजरकर एक नए शिशु को उत्पन्न करता है।

इस तरह से जैनो द्वारा प्रतिपादित सप्तधातु की अवधारणा की वैज्ञानिक व्याख्या की गई।

संदर्भ

१. शरीर पर्याप्तिः सप्तधातुतया रसस्य परिणमनशक्ति : -

— -स्थानांग, अभयवृति, ७२

२. रसासृग्यमांसमेदोऽस्थिमज्जा शुक्रन्त्रवर्चसाम् - योगशास्त्र, ४/७२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. रसो भुक्त-पीतान्न-पान परिणामजो निस्यन्द : -

— योगशास्त्र, स्वप्त विवरण ४/७२

४. हमारे शरीर की रचना, भाग II, डॉ. टी. एन. वर्मा, दी इंडियन प्रेस,

इलाहाबाद, १९३८, पृष्ठ १५०

५. धातुप्रभृतिभिर्द्रव्यैः रक्तीकृते - बहत्कल्पभाष्य, पीठीका. १, उद्दे. -२

— उद्धृत अभिधान राजेन्द्र कोष, भाग ६, पृ. ४८२

६. असृग्यरक्तं रससम्भवो धातु : योगशास्त्र, स्व. ४/७२

७. हैंड बुक ऑफ फिजियोलॉजी - एन. जे. वजीफदार, पॉपुलर बुक डिपो, बम्बई १९४४, पृ. ४३२।

८. मॉडर्न टेक्सट बुक ऑफ जूलोजी : इन्वर्टिवरेट - आर. एल. कोटपाल, रस्तोगी पब्लिकेशस्, मेरठ, १९९०, पृ. ४५८

९. ग्रेंज एनाटोमी : डिसक्रिप्टीव एण्ड एप्लाइज - संपा. टी. बी. जॉन्स्टन और जे. विलिस, लॉगमैन ग्रीन एण्ड को. १९४२. पृ. ५१७

१०. मांसं पिशितमसृग्भवम् - योगशास्त्र, स्व. ४/७२

११. मानव-शरीर-रहस्य, भाग I - मुकुंदस्वरूप शर्मा, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, १९२९, पृ. ९६।

१२. हैंड बुक ऑफ फिजियोलॉजी, पृ. ३५०

१३. वही - पृ. ३५०

१४. मेदो वसा मांससंभवम् - योगशास्त्र, स्व. ४/७२

१५. टेक्स्ट बुक ऑफ ह्यूमन हीस्टोलॉजी - इन्द्रजीत सिंह, पृ. ८१

१६. कठिनग्धम मैनयूअल ऑफ प्रैक्टिकल एनाटोमी संपा. आर्थर राबिन्सन, ऑक्सफोर्ट यूनिवर्सिटी प्रेस १९३०, प-. १४१-१५।

१७. अस्थि कीकसं मेदसम्भवम् - योगशास्त्र, स्व. ४/७२

१८. संस्कृत-हिन्दी-कोश, वामन शिवराम आप्टे, पृ. २७८

१९. टेक्स्ट बुक ऑफ ह्यूमन हीस्टोलॉजी, पृ. १०१-१०२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org